यह जीवन क्यों है?

तट्वर्ती वीर राघव राव

यह जीवन क्यों है?

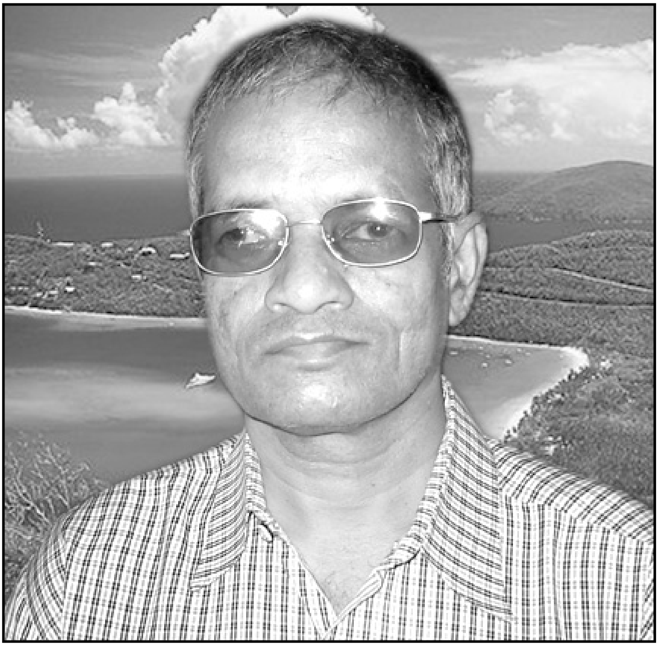

ब्रह्मर्षि तटवर्ती वीरराघव राव

भीमावरम - 534201.

Ph: 9440309812

email : balajipyramid.bvrm@gmail.com

Rs.100/-

श्री तटवर्ती वीरा राघवराव का हिन्दी किताब

1)	आत्म शास्त्र ।	Rs.200/-
2)	ध्यान विद्या ।	Rs.160/-
3)	भगवद् गीता का सार	Rs.160/-
4)	एक और जन्म ।	Rs.160/-
5)	सत्य मार्ग ।	Rs.150/-
6)	भगवान कौन हैं।	Rs.120/-
7)	कर्म सिद्धांत।	Rs.120/-
8)	ब्रह्म ज्ञान ।	Rs.100/-
9)	यह जीवन क्यों है? ।	Rs.100/-

For Books please contact :

Tatavarthi Veera Raghavarao

BHIMAVARAM. Ph: 94403 09812

Note from the Publisher

platform for the mind, body & soul.

Are you looking to share your stories and experiences with the world? We publish a wide range of books on self-help and spirituality.

Visit our website to explore our books

www.mbpublish.com

Also, feel free to get back to us at **contact@mbpublish.com**, with any feedback or suggestions! We would love to hear from you.

Call us on **+91 8447749297** for bulk orders, or if you'd like to publish with us.

MB Publishing House

/mbpublishinghouse

@mbpublishinghouse

यह जीवन क्यों?

प्रत्येक मानव में किसी न किसी दिन यह प्रश्न अवश्य उठेगा। साधारण संदर्भों में महसूस न होने पर भी दुख के समय, अत्यधिक कष्ट के समय महसूस होता है। यह जीवन क्यों है? ईश्वर ने मुझे क्यों बनाया? मेरी रचना कर इतना कष्ट क्यों दे रहा है? मेरा जन्म ही नहीं होता तो ज्यादा अच्छा होता। ऐसी चिन्ता करते हुए दुखी होते हुए क्या करूँ और क्या न करूँ। इस प्रकार छटपटाते रहते हैं।

यह जीवन क्यों? कई लोगो को इस प्रश्न का उत्तर ही नहीं पता होता और प्रश्न के रूप में ही उनके सामने उपस्थित रहता है। इस जीवन का लक्ष्य क्या है? इस जीवन में क्या करना चाहिए? क्या प्राप्त करना है? कहाँ तक है इस जीवन की यात्रा इसका गम्यस्थल कौन सा है? क्या मृत्यु प्राप्त होने तक? इस जीवन यात्रा का अंत है कि नहीं? यदि है तो कब अंत होगा? कहाँ तक है इस जीवन की यात्रा यह भी कई लोगों को ज्ञात नहीं और उन्हें इसकी समझ भी नहीं है। परंतु कई लोग इस जीवन मे अत्यधिक धन अर्जित करना चाहते है वही जीवन का लक्ष्य है ऐसा सोचते हैं और कुछ बड़ी-बड़ी पदवियों, ओहदे प्राप्त करना चाहते है, कई लोग कोई अच्छी नौकरी करना चाहते है जिसमे धन-ओहदा आदि हो, कुछ लोग अभिनेता बनना चाहते हैं, कुछ लोग निर्देशक बनना चाहते हैं, कुछ लोग संगीतकार बनना चाहते हैं, कुछ लोग गायक/गायिका, कुछ लोग खिलाड़ी और कुछ लोग किसी भी क्षेत्र में प्रसिद्ध होकर गिनिज बुक में अपना नाम देखना चाहते हैं।

कुछ लोग वैज्ञानिक कुछ लोग साफ्टवेयर के क्षेत्र में नाम कमाना चाहते है। इस प्रकार अनेकों प्रकार से बहुत कुछ प्राप्त करते रहते है, यही जीवन का लक्ष्य है। जीवन में वही करना है ऐसा विचार करते हैं। इसलिए ही कुछ लोग

मेरे जीवन में केवल उस पदक को जीत लूँ तो बस!!! ऐसा सोचते है! कुछ लोग यह पुरस्कार जीत लूँ तो बस!! वह पुरस्कार प्राप्त कर लें तो बस!! ऐसा सोचते हैं! कई लोग कहते भी है कि जीवन में उस वस्तु को प्राप्त कर लें तो बस और कुछ नही चाहिए। जीवन बिना किसी कमी के बीत जाय अर्थात् बिना किसी अभाव के, यह देह इस दुनियाँ से विदा हो ले बस!! ऐसा भी कई लोग कहते हैं।

कुछ लोग कहते है कि अपने बच्चों का भविष्य बना दें तो बस और कुछ लोग कहते है कि वह पदवी (ओहदा) हमें मिल जाय बस, और कुछ लोग कहते है कोई यादगार कार्य कर जाएँ तो बस!! और कुछ लोग सबके लिए उपयोगी कोई कार्य कर जाएँ तो बस! कुछ लोग कहते हैं कि दूसरों की सेवा करे तो धन्य हो जाएँ! कुछ लोग सोचते हैं कि जीवन तो बस मौज मनाने के लिए और कुछ लोग आनंद प्राप्त करने के लिए ही है ऐसे कई लोग कहने वाले और सोचने वाले होते हैं।

परंतु यह जीवन क्यों, केवल इसलिए? ऐसा प्रश्न करें तो दृढता से उत्तर देने वाले बहुत कम लोग होंगे।

यह जीवन क्यों? इस प्रश्न का उत्तर जानने की उत्सुकता बहुत लोगों में होती है। इस प्रश्न का उत्तर जानने का प्रयत्न करेंगे।

इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त करना है तो सर्वप्रथम हम कौन है? यह ज्ञात करना है। हम कौन है? यह ज्ञात न हो तो इस प्रश्न का उत्तर प्राप्त नहीं होगा क्योंकि हम कौन है ज्ञात होने पर ही जीवन क्यों है? इस प्रश्न का उचित उत्तर प्राप्त होगा।

हम कौन है? हम देहधारी है अर्थात देह धारण करने वाले। देह धारण करने वाली आत्माएँ है हम अर्थात् हम आत्मा है देह नहीं है, यही सर्वप्रथम ज्ञात करना है।

क्योंकि हम देहधारी है इस बोध में रहेंगे तो इस प्रश्न का उचित उत्तर प्राप्त नहीं होगा। मैं आत्मा हूँ इस सत्य को ज्ञात करने पर ही इसका बोध होने पर ही यह जीवन क्यों इसका उचित उत्तर प्राप्त होगा। क्योंकि मैं देह हूँ की भावना में होने वालों को सांसारिक उत्तर ही प्राप्त होंगे। सांसारिक रूप से सोचेंगे तो कई सांसारिक उत्तर प्राप्त होंगे। अंत मे क्या सही है यह समझ में आना कठिन होगा। फिलहाल अधिक प्रतिशत मनुष्य में मैं देह हूँ की भावना होने के कारण उचित उत्तर प्राप्त नहीं हो रहा है। अलग-अलग लोग अलग-अलग उत्तर बतलाते रहते है।

क्योंकि इस प्रश्न का उत्तर सांसारिक जीवन जीने वालों को ज्ञात नहीं हो सकता पर आध्यात्मिक जीवन जीने वाले योगियों को, आत्मज्ञानियों को, इस प्रश्न का उचित उत्तर सरलता से ज्ञात होगा और वे उतनी ही सरलता से इसका उत्तर दे सकते हैं क्योंकि वे इस सृष्टि में दिखने वाली वस्तुओं के बारे में ही नहीं अदृश्य चीजो के बारे में भी ज्ञात किए है और उनका अध्ययन किए है।

उस प्रकार के आध्यात्मिक चेत्ताओं में अग्रण्य श्रीकृष्ण, महात्मा बुद्ध, महावीर श्री आदिशंकराचार्य, गुरुनानक, जीसस क्राइस्ट, मोहम्मद, जैसे योगी व्यास भगवान वशिष्ट जी विश्वामित्र, वाल्मीकि, याज्ञवल्क जैसे ब्रह्मर्षियों के साथ-साथ वर्तमान युग के आत्मज्ञानी स्वामी विवेकानन्द श्री वीरब्रहमेन्द्र स्वामी, योगी वमनाजी, कबीर जी, शिरडी के साँई बाबा, मेहरबाबा, सत्य साई बाबा, जैसे कई महापुरुष इस प्रश्न का उत्तर बताने के साथ-साथ मानव जीवन लक्ष्य प्राप्त करने जीवन के गतव्य स्थान में पहुँचने को कहा है। कहने के साथ-साथ उस मार्ग को भी मानवजाति को बतलाया है। हमें यह जीवन क्यों? इस प्रश्न का उत्तर ज्ञात करेंगे। इस प्रश्न का उत्तर पाना है तो हमें कुछ और प्रश्न करने है उनका उत्तर भी ज्ञात करना है। अतः वे प्रश्न उनके उत्तर क्या है, ज्ञात करेंगे तत्पश्चात् उनका विश्लेषण करेंगे।

प्रश्नः यह जीवन क्यों?

उत्तरः जो कर्म किए है उनका अनुभव करने के लिए (भोगने के लिए)। इस प्रश्न के साथ हम रोक दे तो पूरा उत्तर प्राप्त नहीं होगा। इसलिए कुछ और प्रश्न करेंगे।

प्रश्नः कर्मों को क्यों अनुभव करना है?

उत्तरः अनुभव करते हुए और अनुभव प्राप्त करने के लिए।

प्रश्नः अनुभव क्यों प्राप्त करना है?

उत्तरः जीवन के पाठ सीखने के लिए।

प्रश्नः जीवन के पाठ क्यों सीखने चाहिए?

उत्तरः ज्ञान प्राप्त करने के लिए।

प्रश्नः ज्ञान क्यों प्राप्त करना है?

उत्तरः आध्यात्मिक रूप - आत्म रूप से उन्नति के लिए।

प्रश्नः आत्म रूप से उन्नति क्यों करनी चाहिए?

उत्तरः जीवन के गतव्य स्थान में पहुँचने के लिए जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए।

प्रश्नः जीवन का गतव्य स्थान क्या है?

उत्तरः जीवन का गतव्य स्थान सत्यलोक पहुँचना है।

प्रश्नः जीवन का लक्ष्य क्या है?

उत्तरः जीवन का लक्ष्य पूर्णात्मा बनना, ब्रह्म के स्वरुप में विकसित होना, परमात्मा के रूप में शोभित होना। उपरोक्त उत्तरों का हम विस्तार से गहराई में विश्लेषण करेंगे।

प्रमुख रूप से हम सब सत्यलोक वासी पूर्णात्मा से अर्थात् ब्रह्म से यानी ईश्वर से अलग हुए अंश है। यानि अंशात्मा है, यह ज्ञात करना है। उस प्रकार अंश के अलग हुए आत्मस्वरूप हम एक देह में अर्थात् जीव मे प्रवेश किए है। इसलिए ही जीवात्मा या जीव कहलाते हैं।

माता के गर्भ में निर्मित देह में प्रवेश करते हैं। नौ माह पूरा होने के पश्चात जन्म लेते हैं। प्रथम जन्म लेकर जीवन में प्रवेश करने के पश्चात हमारा कर्म चक्र आरंभ होता है। यानी कर्म करना प्रारंभ करते है। बड़े होते हुए प्रति दिन कई कर्म करते हैं। उस प्रकार के कर्मों को वर्तमान कर्म कहते हैं। उस प्रकार किए कर्मों को जितना अनुभव करना है उतना अनुभव करते हैं बाकी बचे कर्मो को हमारे मृत्यु के पश्चात हमारे खाते में जमा किए जाते हैं। उस प्रकार जमा किए गए कर्मों को 'संचित कर्म' कहते हैं।

उस प्रकार संचित हुए कर्मों को किसी को भी अनुभव (भोगना) करना ही है। अतः उन कर्मों को भोगने के लिए उनमें से कुछ कर्मों को लेकर (इन्हें ही प्राब्ध कर्म कहते हैं) फिर जन्म लेते है यानी जीवन प्राप्त करते है। जन्म लेकर जीवन में प्रारब्ध कर्मों को भोगते है। उन कर्मों को भोगते हुए नए कर्म करते हैं। इन कर्मों को भी जितना भोगना है भोगते हैं। मृत्यु के पश्चात बचे कर्म पुराने संचित कर्म में जुड़ जाते है फिर कुछ प्रारब्ध कर्मों के साथ नया जन्म लेते हैं। इस प्रकार जन्मों का क्रम जारी रहता है। ऐसा कब तक जीवन जारी रहता है? प्रश्न करने पर जब तक हमारे खाते में कर्म शेष रहते हैं तब तक, क्योंकि कर्मों को तो भोगना ही है।

इसलिए यह जीवन क्यों प्रश्न करने पर कर्मों को अनुभव (भोगने के लिए) करने के लिए, ये उत्तर हमने अपने आपको दिया है। हमें एक और शंका होगी कि किए गए कर्मों को क्यों भोगना (अनुभव) है?

अनुभव करते हुए अनुभव प्राप्त करने के लिए ये उत्तर हमने दिया है।

इसके बारे में भी थोड़ा ज्ञात करेंगे।

इस सृष्टि में 84 लाख जीव है। इन सबका उद्भव ईश्वर से ही हुआ है इसलिए सब भगवान के ही स्वरूप है। अतः सब एक है, इस सत्य को सर्वप्रथम हमें समझना चाहिए। यहाँ ऊँच-नीच का भाव नहीं है, सब समान है। इसी विषय को 'ईसावास्य उपनिषद्' में कहा गया है-

श्लोकः **ईशावास्य मिदम् सत्यम् यत्किंच जगत्यामु जगत्।**
तेनव्यक्तने भुंजिदनामागृधः कस्य स्विद्धनम्।।

अर्थात इस समस्त सृष्टि में जो चराचर संसार है वह पूर्ण रूप से ईश्वर से व्याप्त है अर्थात् सब ईश्वर है। इसलिए ईश्वरमय इस संसार को त्याग के भाव से अनुभव करो धन की आशा मत करो, किसी की हिंसा मत करो।

भगवद्गीता में भी यही कहा गया है।

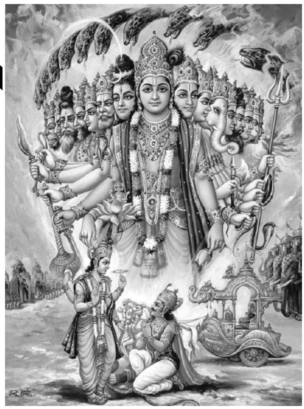

श्लोकः **अथवा बहुनैतेन कि ज्ञातेन तवार्जुन।**
विष्टभ्याह मिदं कृत्यस्न मेकांशेन स्थितो जगत्।।

अर्थात हे अर्जुन। ज्ञात के विस्तार से तुम्हे क्या प्रयोजन इस पूरे जगत में मैं ही व्याप्त हूँ तुम यही जानो।

इस प्रकार **मैं सब में ही हूँ** कहा श्रीकृष्ण ने।

श्लोक- **मया तत् मिदम् सर्वम् जगदण्यक्तमूर्तिनाम् ।**
मत् स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः ।।' (भ.गी. 9-4)

अर्थात में अपने व्यक्त रूप से इस पूरे जगत में व्याप्त हूँ समस्त प्राणी मुझमें स्थित है।

इस प्रकार बतलाते हुए इसको निरूपित करने के लिए अर्जुन को अपना विश्वरूप दिखलाए।

श्लोक- **पश्य में पार्थ रूपाणि शतशोध सहश्रशः ।**
नानाविधानि दिव्यानि, नानवर्णाकृतीनि च।।' (भ.गी 11-5)

अर्थात हे अर्जुन! अनेक प्रकार के अलौकिक, विविधवर्ण आकार वाले, असंख्य रूपों से संबंधित मेरे इन रूपों को देखो।

अतः सर्वप्रथम सब उसी ईश्वर के स्वरूप है। यह जानना है। सब एक ही है यह ज्ञात करना है क्योंकि इस सृष्टि में ८४ लाख जीव है, ऐसा कहा गया है। उसमे पेड़-पौधे, कीड़े-मकोडे, पशु पक्षी, मानवजाति इस प्रकार कई जीवराशियों को हम देखते है। सब भिन्न-भिन्न रूपों में भिन्न-भिन्न आकारों में हमे दिखाई देते है।

पर संसार में सब कुछ देखते हुए सब भिन्न-भिन्न है ऐसा सोचते हैं। उतना ही नहीं में ही महान हुँ ऐसा विचार करते हुए अपनी प्रसन्नता के लिए अपने सुख के लिए अन्य जीवों की हिंसा करते हैं। अनेक प्रकार से कष्ट देते

इस सृष्टि में प्रत्येक जीव को प्रसन्नता से जीने का अधिकार प्राप्त है।

हैं, दूसरों को धोखा देते हैं, अपमान करते हैं, नीचा देखाते हैं, दूसरों की वस्तुओं का अपहरण करते हैं तथा अपनी इच्छानुसार व्यवहार करते हैं। इस प्रकार के व्यवहार से कमजोरवर्ग अबलाएं दुखी होते हैं तथा उन्हें अपनी प्रसन्नता को खोना पड़ता है। सब ईश्वर के स्वरूप होने पर इस प्रकार का व्यवहार करना, दूसरों की प्रसन्नता को छीनना सृष्टि के विरुद्ध है।

मात्र इस सृष्टि में प्रत्येक जीव को प्रसन्नता से जीने का अधिकार प्राप्त है। अन्य जीवों की प्रसन्नता को छीनने का अधिकार किसी को नहीं है क्योंकि दुख प्रत्येक जीव का समान है अर्थात् एक ही यह कहने ज्ञात नहीं होता अनुभव करने से ही समझ में आता है या ज्ञात होता है। उनके व्यवहार में परिवर्तन संभव है। फिर उस प्रकार का कार्य नहीं करेंगे। अतः गलत कार्य करेंगे तो उसका फल अवश्य भोगना पड़ेगा। जो गलत कार्य करते हैं उन्हें ज्ञात होना चाहिए कि वे गलत कर रहे है अन्यथा गलत कार्य करना नहीं छोड़ेगे।

पर इस प्रकार कमजोरो पर दुराचार क्यों करते हैं? क्यों इस प्रकार अधर्मपूर्ण व्यवहार करते हैं? क्योंकि उनका दुख, उनका कष्ट इन्हें ज्ञात नहीं। जब तक इसका अनुभव नहीं करेंगे तब तक दुख कितना कष्टप्रद होता है,

कितना दुर्भर होता यह ज्ञात नहीं होगा। अनुभव करेंगे तो ही ज्ञात होगा। तब अन्यो के प्रति उस प्रकार का व्यवहार नहीं करेंगे। हिंसा नहीं करेंगे।

हाय! उनका दुख भी हमारे दुख के समान ही है न, मैं कितना दुखी हुआ हूँ उनको भी मेरे कारण उतना ही दुख होगा, ऐसा सोचकर उस प्रकार का कार्य करने के लिए पीछे हटेंगे और करेंगे भी नहीं।

उस प्रकार का परिवर्तन जब स्वयं अनुभव करेंगे तभी संभव है। इसलिए नाइजीरिया में एक कहावत है कि. पंछी के बच्चे को किसी नुकीले सींक से घायल करने के पहले उसी सींक से स्वयं को घायल करने पर ज्ञात होगा कि उससे कितना दर्द होता है।

केवल जुबानी तौर पर वैसा काम मत करो उनको कष्ट मत दो पंछियों को मत सताओ, पशुओं को मत मारों, उसे भी तुम्हारी ही तरह दर्द होगा, तकलीफ होगी। कहने से नहीं सुनेंगे उल्टे बहस ही करेंगे। मुझे सब ज्ञात है कहेंगे क्योंकि जीवो का दुख कैसा होता है इसका अनुभव नहीं है। वे जब स्वयं इसका अनुभव करेंगे तो अवश्य परिवर्तन उनके व्यवहार में आएगा।

उदाहरण स्वरूप कोई बदला लेने के उद्देश्य से किसी का पाँव काट लेता है तो हो सकता है अगले जन्म में पैदायशी अपाहिज पैदा हो। पोलियो जैसी बीमारी के कारण पाँव काम न करें अथवा किसी दुर्घटना में पाँव खो दें। किसी भी तरह पाँव खोकर जीवन जीना पड़ सकता है। उस प्रकार जीना कितना कष्टदायक होगा, कितना दूभर होगा यह स्वयं अनुभव करता है तब उसे ज्ञात होता है कि पाँच न होने पर कितना कष्टप्रद है यह जीवन उस कारण आने वाले जन्मों में किसी का भी पाँव नहीं कटेगा क्योकि उसे अनुभव प्राप्त हुआ है उस कष्टप्रद जीवन का।

उसी प्रकार इस जन्म में बदसूरत दिखने वाली स्त्री को देखकर एक स्त्री

उसका अपमान कर उसे नीचा दिखाकर घृणा कर मैं ही खूबसूरत हूँ इस प्रकार के अहंकार से व्यवहार करें तो हो सकता है अगले जन्म में बदसूरत पैदा हो और पूरे जन्म भर अपमान घृणा सहन करते हुए जीवन बिताना पड़े। कितना दुखद है इस प्रकार का जीवन, उसको अनुभव प्राप्त होगा। आने वाले जन्मों में किसी को देखने पर भी उसका अपमान नहीं करेगी, नीचा नहीं दिखाएगी उनको कष्ट नहीं पहुँचाएगी क्योंकि इसका अनुभव उसे हुआ है।

उसी प्रकार नीच कुल के लोगों का अपमान करने पर शायद दूसरे जन्म में उसी कुल में जन्म लेना पड़े, दूसरों के धर्म के प्रति द्वेष भाव रखने पर उसी धर्म मे जन्म लेना पड़े, दूसरे प्रान्तों के दूसरे देशावासियों की आलोचना करें तो उस देश में जन्म लेकर कैसे अनुभव प्राप्त करने होंगे, यह समय संभव है।

अनुभव कितना बड़ा परिवर्तन ला सकता है, कितनी बड़ी सीख दे सकता है नीचे दिए गए उदाहरण में देखेंगे।

घुटने के बल चलना आने वाला बालक दूर जलती हुई आग की लपटों को देखकर वह क्या है इस उत्सुकता में उसे पकड़ने के लिए उसी ओर जाते रहता है क्योंकि उस उम्र में किसी भी वस्तु को हाथ से पकड़े बिना उसे संतोष नहीं होता। उस बच्चे को माँ रोकेगी, न जाने की हिदायत भी देगी पर वह उस लौ को पकड़ने के लिए और तीव्र गति से उस ओर जाने लगता है। तब माँ आकर एक चांटा लगाकर लेकर आती है पर माँ का ध्यान बटन पर वापस उसी ओर जाने की चेष्टा करता है।

पर उसकी माँ यदि जो होगा देखा जाएगा सोचकर छोड़ दे तो बालक आग के पास जाएगा उसमे हाथ डालकर जलाएगा, जलने की असहनीय तकलीफ से रोएगा। पर घाव भरने के बाद दोबारा आग दिखाई देने पर नहीं जाएगा। अब उसे मना करने की आवश्यकता नहीं और अगर जाने के लिए भी कहें तो भी नहीं जाएगा।

इससे पहले मना करने पर नहीं सुना क्योंकि उस समय अनुभव नहीं हुआ था जब उसे ज्ञात हो गया कि उस आग को पकडने पर क्या होगा इसलिए अनुभव होने पर ही किसी के भी व्यवहार में परिवर्तन संभव है। उनकी समझ में बात आती है। ऐसे ही कहते रहेंगे तो कोई नहीं सुनता। अपने आचरण को नहीं बदलते।

इस सृष्टि में सब समान है। सब आपके जैसे ही है। आपका दुख जैसा ही उनका भी दुख है इस प्रकार बुजुर्ग कितना भी समझाएँ, कितना भी कहे नहीं सुनते और न ही अपने व्यवहार को परिवर्तित करते हैं। हिंसा करना नहीं छोड़ते पर अनुभव प्राप्त होने पर बिना कहे समझ जाते हैं। अपने आचरण में परिवर्तन लाते हैं।

उदाहरण स्वरूप जीव हिंसा मत करो, मांस भक्षण मत करो, मुर्गियों, पंछियो को मत मारो, पशुओं को मत सताओ, मछली मत खाओ कहने पर सुनते है क्या? नहीं बिल्कुल नहीं, बहस करेंगे।

सुख नहीं भोगे तो क्यों यह जीवन? सुख प्राप्त करने के लिए ही धनार्जन करते हैं मांस नहीं खाएंगे तो शक्ति कैसे प्राप्त होगी? काम कैसे कर पाएँगे? उसका स्वाद तुम्हें ज्ञात नहीं। खाओगे तो ज्ञात होगा ऐसा कुछ लोग कहते है तो कुछ लोग घास-फूस में क्या रखा है? पुलाब खाओगे तो उसका स्वाद ज्ञात होगा। त्यौहार में भी दाल भात खिलाओगे क्या? ऐसा कहते हैं।

उन सबको ईश्वर ने हमारे लिए ही बनाया है, हम अनुभव करें इसके लिए ही वे है। इस सृष्टि में इस प्रकार कुछ लोग कहते हैं तो कुछ कहते कि हम नहीं खाएंगे तो उनकी संख्या बढ नहीं जाएगी क्या भाजी में भी तो प्राण होते है न फिर उसे खाने पर पाप नही तो मांस खाने पर पाप कैसे होगा? इस प्रकार का बहस करते हैं।

अभी खा रहे है क्या? पीढ़ियों से सब खा रहे हैं कहीं भी देखो सब माँसाहार का ही सेवन कर रहे हैं। यह पाप है गलत है तो क्यों सब खाते हैं? शिरडी साई ने मांस पकाया है ऐसा साक्ष्य पेश करेंगे। भक्त कन्नाया (श्री कालहस्ती में इनका मंदिर है) ने ईश्वर को माँस का भोग लगाया, कुरान में माँस खाने को कहा गया है, जीसस क्राइस्ट ने मछली पकाकर खिलाया है इस प्रकार के प्रश्न आपके सामने रखेंगे।

कई प्रकार के कारण बताते हुए प्रश्न करते हुए बहस करते हुए मांस खाने वाले कई लोग है। मांस खाते हुए परोक्ष रूप से हिंसा का कारण बन रहे हैं पर सृष्टि धर्म के अनुसार हिंसा करना पाप है। पाप का फल भोगना ही पड़ता है। पाप का फल बीमारियों के रूप में भोगना पड़े तो और कष्टप्रद होता है तथा नरक के समान प्रतीत होता है।

गौतम बुद्ध ने कहा है कि **पाप करते समय किसी को भी सुख का भ्रम होता है पर उस पाप के परिणाम को अनुभव करते समय जीवन दूभर प्रतीत होता है।** तब उस दूभर प्रतीत होने वाले पाप क्यों करते हैं? क्योंकि उस अनुभव को प्राप्त नहीं किए इसलिए पाप कहने पर भी पाप कर्म करते रहते है।

इतना ही नहीं पाप कर्म करेंगे तो तकलीफें आएंगी जीवन दूभर हो जाएगा ये प्रत्येक को ज्ञात है। इसलिए पापों को क्षमा करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हैं। पाप नष्ट हो जाएंगे कहने से कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाते है। नदियों में डुबकी लगाते हैं। तीर्थस्थान पर जाते है और इसी प्रकार के कई कार्य करते है।

किसी भी धर्म के अनुयायी हो मंदिर जाकर उनके धर्म अनुसार पूजा, प्रार्थना, आराधना कर पापो की क्षमा करने के लिए क्षमा याचना कर रहे है तो

इसका अर्थ यही होगा कि वे पाप कर रहे हैं। पाप कर रहे हैं इस बात को स्वयं स्वीकार कर रहे है और पाप नहीं किए तो क्षमा-याचना और प्रार्थना क्यों?

ये सब कर रहे है तो कर्म कर रहे है इस बात को स्वीकारना ही नहीं, पाप के कारण दुख तकलीफ भी आएंगे ये ज्ञात है। उन कष्टों को सहना अत्यंत असहनीय है, यह भी ज्ञात है इसलिए क्षमा याचना कर रहे हैं। पर ये सब जानकर भी पाप क्यों कर रहे हैं? अन्यों को तथा अन्य जीवों की हिंसा क्यों कर रहे हैं? दूसरों को धोखा क्यों दे रहे हैं? उन्हें क्यो तकलीफ दे रहे हैं? जो कार्य नहीं करने चाहिए उसे क्यों कर रहे हैं? उस प्रकार के कार्य करते हुए जीवन को नरकतुल्य क्यों बना रहे हैं?

अर्थात कितनी भी जानकारी हो अनुभव प्राप्त नहीं हुआ है इसलिए उस प्रकार के कार्यों को छोड़ नहीं पा रहे हैं और अपने कष्टों को निमंत्रण दे रहे हैं।

उदाहरण स्वरूप बुजुर्ग कहते हैं कि दूसरों के धन का अपहरण नहीं करना चाहिए। सुनने पर भी अनसुना कर देते हैं उन्हें समझ में नहीं आता है। मान लीजिए रुपयों के लिए किसी का जेब काटा, किसी के गले की चैन का अपहरण किया, सेलफोन, बाइक कार जैसी वस्तुओं की चोरी की पकड़ में नहीं आते तक ठीक लगता है लेकिन पाप का भार बढ़ने पर पकड़ में आ ही जाएगा तब सब मिलकर उसकी हड्डियों तोड़ेंगे, अवहेलना करेंगे, तिरस्कार करेंगे और पुलिस पकड़ ले तो कठिन से कठिन दण्ड देंगे।

यह अनुभव जब प्राप्त होता है तब ज्ञात होता है कि कितनी अपमान जनक स्थिति है, कितना कष्टदायक है यह अनुभव उसे सह नहीं पाते और निर्णय करते है कि भविष्य में उस प्रकार के कार्य कभी नहीं करेंगे और करते भी नहीं है। अपमान जनक स्थिति से जीना दूभर और कष्टप्रद होने पर भी उस तरह की गलतियां नहीं करेंगे क्योंकि स्वयं पर बीता हुआ होता है वह घटना याद आते ही गलत कार्य करने की सोचेंगे तो भी नहीं करेंगे। यह सब उस

अनुभव के प्रभाव के कारण ही होता है।

प्रत्येक जन्म में कई अनुभव प्राप्त करते रहते हैं। वे आत्मा में निहित होते है। अतः उस प्रकार का गलत कार्य करने के लिए सोचते है साथ ही अंदर से एक आवाज आती है कि नही करना चाहिए इसलिए पूर्व अनुभव के कारण कुछ लोग कहने पर भी गलत कार्य नहीं करेंगे, कुछ लोग उस गलत कार्य का ख्याल आने पर भी नहीं करते, कुछ लोग समाज के प्रभाव से गलत कार्य करने पर भी यानी माँस खाने से भी कोई यदि कहे कि यह गलत है। पाप है कहने पर तुरंत त्याग देते हैं पर कुछ लोग कितना भी कहो कितने बार भी कहो नहीं त्यागते क्योंकि अनुभव नहीं है इसलिए।

अनुभव दो प्रकार के होते है (1) प्रत्यक्ष अनुभव (2) परोक्ष अनुभव

प्रत्यक्ष अनुभव यानी पाप कर्म करने के बाद चुरंत उसका परिणाम प्राप्त होना या दण्ड मिलना, यह अधिक प्रभावकारक (असरदार) होता है क्योंकि उस कार्य के करने से ही यह दण्ड मिला यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है इसलिए। लेकिन परोक्ष अनुभव यानी अभी मांस का सेवन करने पर कुछ नहीं हुआ पर उस पाप के कारण भविष्य में दुर्घटना हो सकती है या कोई घातक बीमारी हो सकती है पर वह तकलीफ माँस खाने के कारण मिली यह बात उनको ज्ञात नहीं होगी। इसलिए कोई दूसरा कारण बताएँगे। तकलीफ दूर होते ही फिर से पाप करना प्रारंभ करते है क्योंकि उन्हें परोक्ष रूप से अनुभव प्राप्त होता है।

यदि महात्मा बुद्ध श्रीकृष्ण, ब्रह्मर्षि पत्री जी जैसे महापुरुष तुम्हारे हिंसात्मक कार्यों के कारण ही तुम्हारी बीमारियां है, कहने पर भी मन में असमंजस की भावना रहेगी पर उस कार्य को छोड़ नहीं पाते क्योंकि परोक्ष रूप से अनुभव प्राप्त हुआ पर सृष्टि के कर्म सिद्धांत के अनुसार परोक्ष अनुभव प्राप्त करते-करते कुछ समय पश्चात चिंतन करना प्रारंभ करते हैं क्यों यह तकलीफ

हुई? इस प्रकार क्यों हो रहा है? मैंने तो कोई गलती नहीं की? शायद बुजुर्गो ने जो कहा वही सत्य है मांस खाया इसलिए ही यह कष्ट हुआ होगा? अन्यथा वो क्यों कहेंगे? ऐसा कहने से उन्हें क्या लाभ? वहीं कारण होगा? नहीं खाएंगे तो क्यों होगा? छोड़ देंगे तो क्या होगा? कुछ तो खाने के लिए प्राप्त होगा ही, उन पशुओं को ही खाना है क्या वास्तव में उन्हें भी तो दुख पहुँच रहा है। उनका दुख भी तो मेरे दुख के समान ही है, उनके भी तो प्राण है। नहीं-नहीं कहकर चीख रहे हैं, रो रहे हैं, भोग रहे हैं, कष्ट नहीं होता तो क्यों वैसा करेंगे?

मेरा हाथ कटता है तो कितना कष्ट होता है। उसका सर कटेगा तो उसे भी तो उतना ही कष्ट होगा। अनावश्यक रूप से उसे क्यों दुख पहुंचाना इस पाप के कारण में क्यों तकलीफ में रहे। खाना त्याग देने पर क्या होगा? इस प्रकार मन में विचार करते रहेंगे।

कष्ट होने पर बीमारी से तकलीफ सहते समय असहनीय दुख होने पर चिंतन द्वारा परोक्ष कारण ज्ञात करते हैं। तब उस पापकर्म का त्याग करते हैं, आचरण बदलते हैं। यह सब परोक्ष अनुभव के कारण ही संभव होता है।

कुछ भी हो जीवन में दुख अनुभव प्राप्त करने के लिए ही आते हैं। अनुभव प्राप्त होने पर दोबारा गलतियाँ नहीं करेंगे। यदि गलतियां कर रहे हैं तो इसका अर्थ है कि उन्हें अनुभव प्राप्त नहीं हुआ।

कुछ भी हो जो कर्म करते हैं उनका परिणाम क्यों भोगना, क्योंकि अनुभव प्राप्त करने के लिए, परिवर्तन के लिए सृष्टि के सत्य को ज्ञात करने के लिए सब एक ही है, यह सब ज्ञात करने के लिए सब मेरे समान ही है जानने के लिए, सबको समत्य की दृष्टि से देखने के लिए। पाप के परिणाम का अनुभव न होने से गलतियाँ पाप कर्म करते ही रहेंगे, दूसरों को कष्ट पहुँचाते रहेंगे, उनके व्यवहार में परिवर्तन नहीं आएगा पाप करते ही रहेंगे। धर्म विरुद्ध आचरण करते रहेंगे, सृष्टि के विरूद्ध कार्य करते रहेंगे।

ये अनुभव क्यों? क्योंकि सीखना है इन भिन्न-भिन्न अनुभवों से भिन्न-भिन्न पाठ सीखते रहेंगे। एक-एक पाठ द्वारा एक-एक गलती को सुधारते जाएंगे। उस प्रकार कई कन्म लेकर कई पाठ सीखकर अनेक गलतियों को सुधारते हैं। अपने व्यवहार में बदलाव लाते हैं। अच्छे इन्सान बनते है। इसलिए ही इस पृथ्वी को पाठशाला कहते हैं। भूलोक की पाठशाला में प्रत्येक जन्म में अनेक पाठ सीखते है। इसलिए जान लीजिए कि पाठ सीखना है तो अनुभव प्राप्त करना है अनुभव प्राप्त करना है तो कर्म करना है। श्रीकृष्ण परमात्मा ने कहा है कि कर्म करना है, त्यागना नहीं है।

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन
मा कर्मफलहेतुर्भूमीते, सज्गोस्त्च कर्मणि।। (भ.गी.2-47)

अर्थात- हे अर्जुन! तुम्हे कर्म करने का ही अधिकार प्राप्त है, पर कर्मफल की आशा करने का अधिकार नहीं। कर्मफल का कारणभूत नहीं होना चाहिए, पर कर्म करना त्यागना नहीं चाहिए।

उन्होंने यह भी कहा है कि कष्ट आए तब कर्म क्यों करना चाहिए? यह संशय भी उत्पन्न हो सकता है पर कर्म करने के कारण कष्टों का, दुःखों का अनुभव होने पर अनुभव से सीख लेंगे, गलतियों को सुधारेंगे, किसी के भी जीवन में उस प्रकार का कष्ट आने नहीं देंगे। ये सब जीवन में उन्नति करने के लिए ही है। इसलिए ही श्रीकृष्ण जी ने कर्म करना है, त्यागना नहीं है, यह कहा है।

ये अच्छे कर्म हो या बुरे कर्म हो कुल मिलाकर कर्म करना है, पाप कर्म करेंगे तो भी कष्टों से, दुःखो से अनुभव प्राप्त कर पाठ सीखकर मानसिक रूप से परिवर्तित होकर बदलेंगे। इसलिए कर्म करने के लिए कहा है।

हम बच्चों को जिस प्रकार सिखाते है, सही राह दिखाते हैं। प्रकृति भी हमें कष्ट लेकर पाठ सिखाती है हमे सही राह दिखाती है। तद्वारा सारे जीव प्रसन्न

से रह, इस आशय की पूर्ति करती है। वास्तव में जीवन तो पाठ सीखने के लिए ही है।

जीवन केवल धनोपार्जन के लिए संपत्ति बढ़ाने के लिए, परिवार बढ़ाने के लिए सुखों को भोगने के लिए नहीं है। अपने सुख के लिए दूसरों के सुख छीनने के लिए नहीं, उस प्रकार छीनते हुए उन्हें दुखी करते हुए उनको अशांत करते हुए अनेक जीवन समाप्त करने के लिए नहीं। इसलिए जीवन में पाठ सीखना चाहिए अधिक से अधिक जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। सृष्टि के नियम ज्ञात करने चाहिए। अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

तो इन पाठों को क्यों सीखना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करने के लिए ये हमने ज्ञात किया है।

जीवन में कई जन्म इन पाठो को सीखने के पश्चात उनमें चिंतन मनन प्रारंभ होता है क्या? दुःख क्यों आ रहे है? ये कष्ट दुःख भरें जन्म लेना, क्या मृत्यु को प्राप्त होना, क्या मृत्यु को प्राप्त होने वाले हैं? कहाँ जा रहे हैं? जाने वाले क्या वापस आएंगे? क्या नहीं आएंगे? आयेंगे तो किस प्रकार आएंगे? जाने वाले क्या वापस आएँगे? कब आएंगे? ये दुख अंत हो ऐसा उपाय हम नहीं कर सकते है क्या? कष्ट दूर हो इसके लिए क्या करना चाहिए? दुख न आए इसके लिए क्या उपाय करना चाहिए? संपूर्ण मानवजाति का जीवन एक जैसा क्यों नहीं है? कुछ लोगों को कष्ट, दुख कुछ लोगों को सुख ही सुख कुछ लोगों को दुख ही दुख। कुछ लोगों को आनंद ही आनंद. कुछ लोगों को बीमारियां, कुछ लोगों को प्रसन्नता इस प्रकार कई प्रकार के जीवन पर कई-कई विचार आते है। कुछ समझ में नहीं आता पर जानने की उत्सुकता रहती है।

तब लगता है कि क्या यह जीवन किस लिए है? क्या करने के लिए है? इस प्रकार के कई प्रश्न उत्पन्न होते हैं।

तब वे गुरुओं से, बुजुर्गों से मिलते हैं, उनसे प्रश्न कर अपने संशयों का निवारण करना चाहते हैं, आध्यात्मिक पुस्तको का अध्ययन करते हैं। स्वामी विवेकानन्द, रमण महर्षि मेहरबाबा जैसे महापुरुषों की पुस्तकें, भगवद्गीता, बाइबिल, कुरान आदि ग्रंथों का अध्ययन करते हैं। तब उन्हें गुरूओं के द्वारा, ग्रंथों के द्वारा कुछ उत्तर प्राप्त होते रहते है।

वे कहते हैं कि तुम अज्ञान में जी रहे हो, इसलिए तुम्हे कुछ समझ में नहीं आ रहा है। अज्ञानता से किए गए कार्यों के कारण ही तुम्हें कष्ट या दुख हो रहे है। इस प्रकार के कष्टो से बाहर निकलना है तो तुम्हे ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। ज्ञान प्राप्त करने से ही तुम्हे सब ज्ञात होगा। सब समस्याओं को हल कर सकते हो। तुम्हारे जन्म से मृत्यु तक का जीवन ही नहीं, मृत्यु के पश्चात भी तुम्हारा जीवन है। इस सृष्टि में दिखने वाला यह पृथ्वी लोक ही नहीं, कई करोड़ो लोक है। धरती पर दिखाई देने वाले मानव तथा अन्य जीव ही नहीं, अन्य लोकों में भी कई प्रकार के जीव है। तुम्हे इस धरती पर दिखाई देने वाली विशेषताओं से अधिक विशेषताएँ एवं अजूबे है। धरती पर तुमने जो जाना और जो तुम्हें दिखाई दे रहा है वह बहुत कम है, तुम्हे बहुत कुछ जानना है।

देह त्यागने के पश्चात मानव परलोक में बिना देह के निवास करते हैं।

यह सब तुम्हें परलोक ज्ञान के पश्चात् ज्ञात होगा पर तुम परलोक ज्ञान ज्ञात नहीं कर रहे हो। उन लोको के बारे में विचार नहीं कर रहे हो, इसलिए सृष्टि के बारे में तुम्हे ज्ञात हो यह बहुत कम हैं। तुम्हें जो ज्ञात करना है और जो प्राप्त करना है वह ज्ञान अनंत है। पूर्णरूप से ज्ञात किए बिना उस असमंजस की स्थिति से बाहर नहीं निकल पाओगे। इसलिए ज्ञान प्राप्त करो, सब कुछ ज्ञात करो, ऐसा कहते है। वे (गुरु और बुजुर्ग) आगे और भी कहते हैं कि जीवन में होने वाली संपूर्ण घटनाएँ तुम्हे सीखने के लिए ही है। ये घटनाएँ, दुःख तुम्हे कई पाठ सिखाते हैं।

जीवन मे जितना अधिक सीखेंगे उतना अधिक ज्ञान प्राप्त करेंगे। तद्?ारा किस प्रकार व्यवहार करना है अर्थात क्या करना है? क्या नहीं करना है? यह ज्ञात होगा जैसे-जैसे ज्ञान बढ़ता है, जिस कार्य को नहीं करना चाहिए उसे नहीं करोगे फलस्वरूप दुःख और कष्ट नहीं भोगोगे। उसी प्रकार उचित कार्य कर जीवन को सही मार्ग पर लाओगे। प्रसन्नतापूर्वक जीवन जियोगे ऐसा वे (गुरु और बुजुर्ग) कहते हैं।

अतः किसी को भी क्या जानना चाहिए? यह ज्ञात होना चाहिए कि ज्ञान प्राप्त नहीं करने पर अज्ञान में ही जीवन व्यत्तीत करेंगे। अतः क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए, ज्ञात नहीं होने के कारण जो कार्य नही करना चाहिए, परंतु सृष्टि के विरूद्ध कार्य, धर्म के विरूद्ध कार्य करते हैं। सबकी हानि होती है और स्वयं भी हानि उठाते है।

पर उस तरह के कार्य क्यों करते हैं? क्योंकि उस तरह के कार्य करने पर क्या हानि होती है, न करने पर क्या लाभ है, इसका ज्ञान न होने के कारण ही असंगत कार्य करते हैं। परंतु प्रत्येक जन्म में अनुभव से कुछ पाठ सीखने के कारण ज्ञान प्राप्त करते है। इसीलिए पत्री जी ने अनुभव ही ज्ञान है कहा है। उससे पहले अन्य लोगों के कहने पर भी उन्हें समझ में नहीं आता इसलिए जिन्हें नहीं करना चाहिए उस प्रकार के कार्य करते रहते हैं। ज्ञात होने पर भी गलतियाँ करते रहते हैं।

ज्ञान न होने के कारण जानकारी होने पर भी किस प्रकार गलतियाँ इसके लिए एक उदाहरण से स्पष्ट करेंगे।

कोई भी पूछे कि असत्य कहना चाहिए क्या? तो कहेंगे कि नहीं, असत्य कहना बहुत बड़ा पाप है। पर नित्य कई झूठ, कई असत्य कथन कहते ही रहते है। छोटी-छोटी बातों के लिए भी झूठ कहते है। मजाक में भी कई असत्य कथन कहते हैं। झूठ बोलते हुए पकड़ में आने पर मैं तो मजाक कर रहा

था कहते हैं।

वही ज्ञानवान महापुरुष विवेकानन्द को लीजिए क्या वे असत्य कथन कहेंगे? कैसी भी परिस्थिति हो वे असत्य नहीं कहेंगे। अन्यों से किसी प्रकार का दुराव-छिपाय नहीं रखेंगे जो नहीं है उसे नहीं कहेंगे और जो है उसे साफ और स्पष्ट रूप से कहेंगे। कोई भी परिस्थिति हो वे असत्य नहीं कहेंगे क्योंकि उन्हें ज्ञात है कि असत्य नहीं कहेंगे। उन्हें ज्ञात है कि असत्य कहने पर कितनी हानि होती है। उसका परिणाम कितना हानिकारक होता है। असत्य कथन कहकर अन्यों को धोखा देना सृष्टि के विरुद्ध है। उसका परिणाम उन्हें किस प्रकार का होगा उन्हें ज्ञात है। इतना ही नहीं कोई यदि आप पर विश्वास करता है तो उन्हें असत्य कहकर धोखा देने पर वे किस प्रकार दुखी होते है ये उन्हें ज्ञात है इसलिए वे परिस्थिति कैसी भी हो असत्य नहीं कहेंगे।

पर साधारण लोग, सामान्य व्यक्ति ज्ञात होने पर भी ऐसा क्यों करते हैं? क्यों झूठ बोलते हैं? क्योंकि उन्हें ज्ञान नहीं है, ज्ञान के अभाव में इस प्रकार की गलतियां करते हैं। स्वयं अपना नुकसान कर रहे हैं। साथ ही साथ दूसरो का भी नुकसान कर रहे हैं।

पर कई गुरुओं के कारण, बुजुर्गों के कारण उनके व्याख्यान (भाषण) द्वारा कई विषय, धर्म ज्ञात कर रहे है केवल ज्ञात करने से ही कोई कार्य सिद्ध नहीं होता। उन्हें आचरण में भी लाना चाहिए। कई लोगों को कई विषय ज्ञात है। क्या वे उन सबका आचरण करते हैं? हम अवश्य कह सकते हैं कि नहीं क्योंकि उन्हें अभी तक उसके परिणाम का अनुभव नहीं हुआ इसलिए 'अनुभव ज्ञान ही आचरण में, व्यवहार में आता है यह जानना चाहिए। अतः अनुभव द्वारा सीखे गए पाठ के कारण जो ज्ञान प्राप्त उससे गलतियों को सुधारते ही नहीं बल्कि गलतियाँ करते भी नहीं है। ज्ञान बढ़ने के साथ- साथ जीवन में गलतियां, पाप कम होते जाते हैं।

तब यह किस लिए? केवल गलतियाँ, पाप कम करने के लिए या और कोई कारण है? तो यह ज्ञान आध्यात्मिक रूप से आत्मवत उन्नत होने के लिए आत्मा यानी हम जितना अधिक ज्ञान प्राप्त करेंगे उतना अधिक उन्नत होंगे। तब आध्यात्मिक रूप से आत्मवत उन्नति क्यों?

सर्वप्रथम हमें यह ज्ञात करना है कि हम सब देह नहीं देहधारी है। अर्थात देह को धारण किए हुए आत्माएँ हैं। हम सब आत्मा है यह हमने पूर्व में ही ज्ञात किया है।

परन्तु संसार में सब हम देह है ऐसा विचार करते हुए देह रूप में ही उन्नति करने का प्रयास कर रहे है। देह के लाभी के लिए ही अर्थात् धन, नौकरी, व्यापार, उद्योग, पदवी इन सब विषयों में उन्नति करने का प्रयत्न कर रहे है ये सब देह से संबंधित है। पर आत्मा है तो आत्मवत उन्नति करना है यह जानना है। आत्मा से लाभ प्राप्त करना चाहिए। आत्मा की उन्नति ही आध्यात्मिक उन्नति कहलाता है।

क्योंकि सांसारिक रूप से उन्नति भिन्न है, आध्यात्मिक उन्नति भिन्न है। सांसारिक रूप से प्रगति या उन्नति करने वाले सांसारिक लाभ ही प्राप्त करेंगे अर्थात देह लाभ ही प्राप्त करेंगे पर आध्यात्मिक रूप से उन्नति करने वाले आत्मलाभ प्राप्त करेंगे। हम आत्मा है इसलिए आत्मलाभ हमारे वास्तविक लाभ है। आत्मलाभ ही हमारी आत्मा की उन्नति के सहायक होंगे। आत्मा की उन्नति अर्थात् ज्ञान की उन्नति के साथ देह त्यागने के पश्चात् सृष्टि के करोडो लोको में से उन्नत लोक अर्थात् ऊर्ध्व लोक में जाएँगे। उस प्रकार आर्य लोक में पहुँचना ही आत्मा की उन्नति है।

अगर देखा जाए तो संसार में एक रिवाज है, प्रथा है कि कोई अगर मृत्यु को प्राप्त करता है तो दो प्रकार के कार्यक्रम करते हैं-

(१) मित्रगण शोक सभा का आयोजन कर उनकी (मृत्यु को प्राप्त व्यक्ति की) विशेषताओं का उल्लेख कर उनकी आत्मा की शांति के लिए ईश्वर से प्रार्थना करते हुए दो मिनट का मौन धारण करते है।

(२) रिश्तेदार कर्मकांड करते हैं क्योंकि देह त्याग कर जाने वाली 'आत्मा' उन्नत लोक, उत्तम लोक में पहुँचे अर्थात अब तक जिन लोको में हैं उससे भी उन्नत लोक में जाए इस उद्देश्य से कर्मकाण्ड करते हैं। ये सब क्यों करते है? क्योंकि मृत्यु को प्राप्त हुआ व्यक्ति, व्यक्ति नहीं आत्मा है इसलिए आत्मा की उन्नति के लिए ही ये सब कार्यक्रम करते हैं।

यहाँ जानने योग्य बात यह है कि उनके लिए की गई प्रार्थनाएँ, कर्मकाण्ड इन सबसे आत्मा का क्या प्रयोजन? ''आत्मा' की उन्नति होनी है अथवा आत्मा उन्नत में जाए उसके लिए जब वे जीवित थे तब देह से की गई साधना सीखे गए पाठ से प्राप्त ज्ञान के कारण ही आत्मा अपनी उन्नति करते हुए ऊर्ध्व लोकों में पहुँचती है तो आत्मा की उन्नति किसलिए? आत्मा की उन्नति न हो तो कोई नुकसान है क्या? आत्मा की उन्नति जीवन के गतव्य तक पहुँचने के लिए जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ऐसा पूर्व में कहा है तो जीवन के गतव्य सीन पर क्यो पहुँचना है, जीवन के लक्ष्य को क्यो प्राप्त करना है।

गतव्य - लक्ष्य

जीवन के लिए मंजिल (गतव्य) आवश्यक है। लक्ष्य भी आवश्यक है। हमारी मंजिल यदि हमें ज्ञात न हो तो किस ओर जाना है हमारी जीवन यात्रा किस प्रकार प्रारंभ करना है कैसे ज्ञात कर सकते हैं? उसी प्रकार हमारी यात्रा किस ओर जाकर खत्म होगी? किस ओर जा रहे हैं? ये सब बातें कैसे ज्ञात होगी? कौन सी राह है? अभी हम किस राह पर जा रहे है? सही राह पर नहीं

जाएंगे तो अभी तक जितनी यात्रा किए वह सब व्यर्थ है? पूरा परिश्रम व्यर्थ जाएगा। अतः सर्वप्रथम हमे अपनी मंजिल जानना है। इसके लिए सही मार्ग दर्शको का अनुसरण करना चाहिए। भेड़ अपने चरवाहे का अनुसरण करते हैं उसी प्रकार जीवन की यात्रा करने वाला व्यक्ति भी चरवाहे को अर्थात् सही मार्गदर्शक को खोज कर उनका आश्रय लेना चाहिए अन्यथा उसका जीवन बिना चरवाहे के भेड़ों जैसा हो जाएगा।

बिना चरवाहे के भेड़

बिना चरवाहे के भेड़ों की स्थिति उसी प्रकार है जिस प्रकार मंजिल बिना राही की होती है। राह दिखाने वाले व्यक्ति के बिना भेड़ो को जानकारी नहीं होती कि किस ओर जाना है? उनका आहार (घास, पेड़ो की पत्तियों) कहाँ प्राप्त होगा? मार्ग भटकने का डर रहेगा। उन पर किसी प्रकार की विपत्ति भी आ सकती है। अंत में विकट परिस्थितियों में पड़ कर उलझ जाते है और कष्टों का सामना करना पड़ता है।

उसी प्रकार मनुष्य के जीवन में भी सही मार्ग अर्थात धर्म का मार्ग, सत्य का मार्ग, नैतिक मार्ग दिखाने वाले नहीं होने पर क्या कर रहे है? क्या करना है? इसका ज्ञान नहीं होता है। जो वर्जित है वही करेंगे। अंत मे दुख और कष्ट सहते हैं।

वर्तमान समय में समाज में जनता भी बिना चरवाहे के भेड़ों जैसा ही जीवन व्यतीत कर रही है। उनका गतव्य क्या है? उनका लक्ष्य क्या है? उन्हें ज्ञात नहीं कि क्या कर रहे हैं? कहाँ जा रहे हैं? ज्ञात नही सब अस्त व्यस्त सब लोक विरूद्ध कार्य, राह ज्ञात नहीं गतव्य का ज्ञान नहीं ऐसे पथिक के समान है। उनकी बिना चरवाहे के भेड़ों जैसी स्थिति है।

इसलिए जीसस क्राइस्ट को चरवाहा कहा गया है। चरवाहा यानी केवल भेड़ो को चराना या उनकी देखरेख करना नहीं भेड़ो को चराने वाला यही अर्थ नहीं है। सबको सही ग्रह दिखाने वाला, सबकी रक्षा करने वाला, जनता को कोई हानि न हो वे सुख शांति से बिना किसी कमी के जीने लायक बनाने वाला यह अर्थ होता है। गलत राह पकड़कर हानि उठाये इससे रक्षा करने वाला बचाने वाला होता है।

उसी प्रकार धरती पर आए सारे योगीश्वर श्रीकृष्ण परमात्मा, गौतम बुध्द, हजरत मुहम्मद, गुरुनानक, महावीर, पत्री जी जैसे महापुरूष सब हमारी रक्षा करने वाले **रक्षक** ही है। हमे सही मार्ग दिखलाने वाले मार्गदर्शक ही है। दुख न हो यही देखना नहीं तो दुख में उलझे हुए लोगों को उस दुःख के सागर में डूबे हुए लोगों को उबारने के लिए ही आए है ये महापुरूष दुःख के निवारण का मार्ग जानने वाले ज्ञानी है जो इनका अनुसरण करते हैं, इनकी राह पर चलते है। वे सब अवश्य दुख के सागर से उबरते ही है। अतः उनकी राह पर चलने वाले सब सुरक्षित होते हैं, उनकी राह की अवज्ञा करने वाले असुरक्षित अर्थात् बिना चरवाहे के भेड़ जैसे होते हैं।

उसी प्रकार जीवन का एक लक्ष्य भी होता है, हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है? इसका ज्ञान न होने पर क्या प्राप्त करना इसका ज्ञान न होने पर जीवन में करना क्या है? इसकी जानकारी किस प्रकार प्राप्त होगी? क्या कर रहे है? जो कर रहे है वह सही है कि नहीं? यह कैसे ज्ञात होगा? हमारे लक्ष्य की जानकारी न होने पर जो प्राप्त किए विचार ये सब व्यर्थ ही है न! हमारा परिश्रम तकलीफ सब कुछ व्यर्थ ही है न!

हम अनेक प्रकार के कार्य कर धन अर्जित करते हैं बहुत कुछ प्राप्त कर प्रसन्न हो जाते हैं, गर्वित होते है, अपने मुँह से ही अपनी तारीफ करते है। मेरे जैसा महान कोई नहीं ऐसा सोचते हैं। परंतु सब व्यर्थ ही है न! हमें करना कुछ

और था, किया कुछ और इसका क्या प्रयोजन? समय और शक्ति आखिर में जीवन भी कितना व्यर्थ किए। इसलिए हमारी शक्ति और जीवन व्यर्थ न हो तो इसके लिए सर्वप्रथम हमारा लक्ष्य क्या है इसे निश्चित करना चाहिए। उस दिशा में हमारा प्रयत्न, हमारी कोशिश होनी चाहिए। उसके उपयुक्त गुरु के शरण में जाना चाहिए। उनके द्वारा हमे क्या करना है इसे ज्ञात करना चाहिए। उसके लिए साधना करना चाहिए। हमारा समय शक्ति जीवन उस लक्ष्य के लिए समर्पित करना चाहिए। विशेष प्रयत्न करना चाहिए तब सरलता से लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। जीवन का सही उपयोग कर सकते हैं।

जीवन में लक्ष्य को प्राप्त किए बिना गतव्य में नही पहुँच सकते। जीवन के गतव्य में नहीं पहुँचे तो बार-बार धरती पर जन्म लेना पड़ेगा। जीवन यात्रा उसी प्रकार जारी रखनी पड़ेगी। इस प्रकार कितने समय तक जन्म लेते रहेंगे। इसलिए हमारी (आत्मा) जीवन यात्रा मे गतव्य स्थान है? हमें (आत्मा) जीवन में क्या करना है? ये अब ज्ञात करेंगे-

धरती पर आते हुए हम लोगों का (आत्मा का) गंतव्य स्थान सत्यलोक है। इस गंतव्य मे अर्थात् सत्यलोक में पहुँचने तक बार-बार धरती पर जन्म लेते ही रहेंगे। जीवन यात्रा कभी समाप्त नहीं होगी। आते जाते रहने में क्या हानि है?

ऐसा हम सोच सकते हैं। इसलिए ही श्री आदि शंकराचार्य जी ने कहा है कि

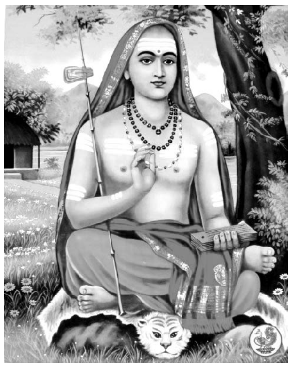

पुनरपि जनन, पुनरपि मरण,
पुनरपि जननी जठरे शयनम् ।
इह संसारे बहुदुस्तारे,
कृपया पारे पाही मुरारे।।

अर्थात- बार-बार जन्म लेना, बार-बार मृत्यु को प्राप्त होना, बार-बार माता के गर्भ में आना, इस प्रकार के जन्म-मृत्यु का संसार बड़ा ही दूभर प्रतीत हो रहा है। करुणामय कृपा कर मेरी रक्षा करो।

उपरोक्त श्लोक के द्वारा शंकराचार्य जी का संदेश यह है कि इस प्रकार जन्म लेकर मृत्यु को प्राप्त होते हुए दुःख अनुभव करना नहीं, उस प्रकार के जीवन से पार पाने, उबरने का संदेश दे रहे हैं।

अर्थात् जन्म-मृत्यु का जीवन नहीं जन्म मृत्यु रहित जीवन अर्थात् मोक्ष प्राप्त करने का संदेश दे रहे हैं। वह स्थिति हमारा गतव्य स्थान यानी सत्यलोक पहुँचने पर ही संभव है। सत्यलोक पहुँचने पर अब धरती पर जन्म लेने की आवश्यकता नहीं। भगवदगीता में श्रीकृष्ण ने कहा है-

श्लोक- **आब्रह्म भुवना ल्लोका पुनरावर्तिनोर्जुनः**
मामुसेत्य तु कौन्वेय पुनर्जन्म न विद्यते।। (भ.गी.8-16)

अर्थात- हे अर्जुन! उस ब्रह्मलोक के समान लोको में जाने पर भी वापस धरती पर जन्म लेना ही पड़ेगा पर मैं जिस लोक में हूँ उस लोक में (सत्यलोक) आने पर फिर से जन्म लेने की आवश्यकता नहीं होती। अर्थात् धरती पर आने की जन्म लेने की आवश्यकता नहीं। श्रीकृष्ण परमात्मा के कहे अनुसार हमारा गंतव्य स्थान सत्यलोक है अर्थात् नदी सागर में मिल जाती है उसी प्रकार सत्यलोक में स्थित पुर्णात्मा में एक होना है।

नदी - सागर (समुद्र)

नदी कितनी भी दूर यात्रा करें कितने भी समय प्रवाहित हो, कितने ही कष्टों का सामना करते हुए प्रवाहित होती रहे, कितने ही घुमावदार मोड हो, बाधाओं, रुकावटों को पार करते हुए अंत में सागर में मिलने तक, अपने

अस्तित्व के नष्ट होने तक प्रवाहित होना ही है। सागर में उसका संगम होते ही उसकी यात्रा रुक जाती है, सागर में मिलना ही नदी की मंजिल है, गतव्य स्थान है।

उसी प्रकार मानव भी कितने ही जन्म ले, कितने भी समय तक जीवित रहे, प्रत्येक जन्म में कितने भी दुःख का अनुभव करें, कितने भी कष्ट उठाए अंत में ‘मैं या अहम् का अहंकार मेरा या मेरी की ममता का त्याग कर सत्यलोक में स्थित पूर्णात्मा में एकत्व प्राप्त होने तक जीवन यात्रा जारी रखनी ही है।

अंत में देवता प्राप्त करने पर भी अंतिम जन्म में श्रीराम के समान, गौतम बुद्ध के समान, ईसा मसीह जैसे कष्ट सहना ही होगा।

नदी अपने अस्तित्व को खोने के समान ही मानव को भी अपने जीवन यात्रा में अपने अस्तित्व को खोना है यानी (अहम्) मैं, मेरा इस भावना को समाप्त करना है। उसके लिए ध्यान करना आवश्यक है। जब तक नदी, नदी रहती है तो एक आकार होगा, एक नाम होगा, सागर में मिलते ही नदी अपना नाम, अपना रूप सब कुछ खो देती है।

उसी प्रकार मानव जब सत्यलोक पहुँचता है तो मैं, ’मेरा की भावना को खो देता है। एक और उदाहरण देखते है-

स्वगृहम (अपना घर)

कोई भी हो अपना घर छोड़कर कहीं भी जाए उन्हें सुख चैन प्राप्त नहीं होता, परन्तु अपने घर में प्रवेश करते ही सुख चैन, आराम का अनुभव करते है। देहधारी मनुष्य कहीं भी जाए वापस अपने घर में जाने के बारे में ही विचार करता है।

उसी प्रकार आत्मा भी सत्यलोक जो उसका अपना घर है, उसे छोड़कर किसी भी लोक में जाए शाश्वत रूप से सुख प्राप्त नहीं करती है। अपने स्वगृह अर्थात् सत्यलोक पहुँचने पर ही शाश्वत रूप सुख प्राप्त करती है। वही आत्मा का लक्ष्य है, वहीं मानव जीवन का लक्ष्य है।

सदा आत्मा की आकांशा यही होती है कि अपने घर यानी सत्य लोक में पहुंचे। हम अपने मंजिल तक कब पहुँचेंगे? जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने पर हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है? श्रीकृष्ण परमात्मा के समान, गौतम बुद्ध के समान ईसा मसीह के समान, हजरत मुहम्मद के समान, महावीर ब्रह्मर्षि पत्री जी के समान पूर्णात्मा बनना है। तभी हम उनके समान सत्यलोक पहुँच सकते हैं।

यहाँ हमें यह जानना आवश्यक है कि जो पूर्णात्मा बन जाते हैं उन्हें को- क्रियेटर्स कहते है व अपने अंशों से कुछ अंशो की सृष्टि कर इन अंशो को इन अंशात्माओं को एक शरीर में प्रवेश कराते हैं। शरीर में प्रवेश किए हुए अंशात्मा को ही 'जीवात्मा कहते हैं। उस जीवात्मा को पूर्णात्मा एक लक्ष्य निर्देशित करती है। तुम्हें भी मुझ जैसा ही उन्नत्ति करने तक जन्म लेते ही रहना है। पूर्णात्मा बनने के बाद सत्यलोक पहुँचोगे, मुझमे एक हो जाओगे तब और जन्म लेने की आवश्यकता नहीं। इस प्रकार जीवात्मा लक्ष्य निर्देशित करती है।

यहाँ एक बात हमें याद रखना है कि माँ कितने भी बच्चों को जन्म दे माँ, माँ के समान ही रहती है, जरा भी परिवर्तित नहीं होती। उसी प्रकार पूर्णात्मा से कितने ही अंश क्यो न सृष्टित हो पूर्णात्मा पूर्ण ही रहती है। पूर्णात्मा एवं अंशात्मा दोनों एक ही है।

इसलिए ही दशावतार अर्थात् श्री रामचन्द्र जी, श्री कृष्ण गौतम बुद्ध सब विष्णु के अंश है, यानी भगवान विष्णु ही है। शिरडी के साई बाबा को शंकर जी अंश कहते हैं। बाबा ही शिवजी ऐसा कहा जाता है।

उसी प्रकार माँ के गर्भ से जन्म लिया हुआ शिशु बड़ी होकर माँ बन कर वह भी बच्चों को जन्म देती है। उसी प्रकार पूर्णात्मा के द्वारा सृष्टि अंशात्मा भी उन्नति करते हुए ज्ञान प्राप्त कर पूर्णात्मा बनती है। अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करती है। पूर्णात्मा बनती है और अंशात्माओं की सृष्टि करती है।

इसी विषय का उल्लेख ईशावास्य उपनिषद् में किया गया है।

श्लोक- **'ओम् पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।**
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते ।।'

अर्थात वह पूर्ण है अर्थात् ब्रह्म पूर्ण है, यह पूर्ण है यानी (पूर्णात्मा से अलग होकर जीव में, शरीर में प्रवेश किया हुआ जीवात्मा) जीवात्मा भी पूर्ण है। उस पूर्ण वस्तु से यानी ब्रह्म से यह पूर्ण वस्तु यानी जीवात्मा की सृष्टि हुई। यह पूर्ण वस्तु अर्थात् जीवात्मा ज्ञान के कारण पूर्णत्व को प्राप्त कर परमात्मा का रूप लिया ब्रह्म के रूप में विलसित (खिलेगी) होगी। पूर्णात्मा बनेगी। सहसृष्टिकर्ता होगी।

अतः हम देह नहीं है। देह मे स्थित 'आत्मा' है हमारा लक्ष्य पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पूर्णात्मा बनना है। हमारी मंजिल, गतव्य स्थान सत्यलोक पहुँचना, सहसृष्टिकर्ता बनकर सृष्टिकर्ता द्वार किए गए कार्यों को करना ही हमारा उददेश्य है।

इसलिए ईशावास्य उपनिषद् के शांति मंत्र में आदि अर्थात् सृष्टिकर्ता पूर्ण है सृष्टिकर्ता से अलग होकर जीवाश्म में परिवर्तित अंश भी पूर्ण है। कहा गया है उतना ही नहीं यह जीवाश्म ज्ञान से परिपूर्ण प्रकाशित होती है, ऐसा भी कहा गया है। जीवाश्म को विद्या अथवा ज्ञान किस प्रकार प्राप्त होगा? इसी

विषय को पूर्णात्मा की स्थिति में उन्नत हुए ब्रह्मर्षि वशिष्ट जी, आदि शंकराचार्य जैसे महापुरूषों ने कहा है कि जो (१) ध्यान साधना (२) स्वाध्याय (ज्ञान से परिपूर्ण पुस्तको को पढ़ना) (३) सज्जन सांगत्य (आत्मज्ञानियों के प्रवचन, ज्ञान भरी बातें सुनना) विशेष रूप से करते हैं। वे शीघ्र ही पूर्ण रूप से ज्ञान प्राप्त कर जीवन के लक्ष्य को अर्थात् पूर्णात्मा के रूप में उन्नति करते हैं।

यही विषय ब्रह्मर्षि पत्री जी के द्वारा भी कहा गया है। इसलिए हमारे जीवन का लक्ष्य केवल खाना, पीना, सोना नहीं अपितु ध्यान साधना, स्वाध्याय, सज्जन सांगत्य के द्वारा पूर्णात्मा के रूप में उन्नति करना है, अनुनित्य ध्यान साधना करेंगे।

हम आत्माएँ है हमे उन्नति क्यों करनी है? क्योंकि गंतव्य स्थान में पहुंचना है, जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना है। हम पूर्णात्मा से अलग होकर आए है, लक्ष्य प्राप्त करने तक बार-बार जन्म लेना आवश्यक है। अतः लक्ष्य प्राप्त कर मंजिल में पहुँचना है। इतना ज्ञान, ध्यान मार्ग हमें प्रदान करने वाले ब्रह्मर्षि पत्री जी को कोटि कोटि धन्यवाद। अन्यथा हम सब गंतव्य स्थान से अनजान राही ही है। पत्री जी ने कई लोगो को ज्ञान प्रदान किया अन्यथा हम सबको बारम्बार जन्म लेकर पृथ्वी पर आना पड़ता और हम इन जन्मों को व्यर्थ भी करते।

इसलिए याद रखिए कि यह जीवन केवल धनार्जन करने के लिए, परिवार का पालन-पोषण करने के लिए, सुख भोगने के लिए, दुख और कष्टों से निजात पाने का प्रयत्न करते हुए जीवन को समाप्त करने के लिए नहीं है। उस प्रकार जीवन-यापन करना हमारा लक्ष्य नहीं, मृत्यु को प्राप्त करना हमारा गंतव्य नहींं

इस जीवन का एक गंतव्य स्थान है, एक लक्ष्य है, उस दिशा में प्रयत्न करना चाहिए और सफलता प्राप्त करनी चाहिए। प्रयत्न कर सफलता प्राप्त करने वाले ही महान होते हैं। वे लोग ही जीवन का सदुपयोग करने वाले होते हैं। ये सब भली-भाँति समझना है तो आध्यात्मिक त्रिरत्न (१) ध्यान साधना (२) ज्ञानियों की पुस्तको को पढ़ना, (३) ज्ञानियों से सांगत्य करना चाहिए। पत्री जी के मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

अनुबंध

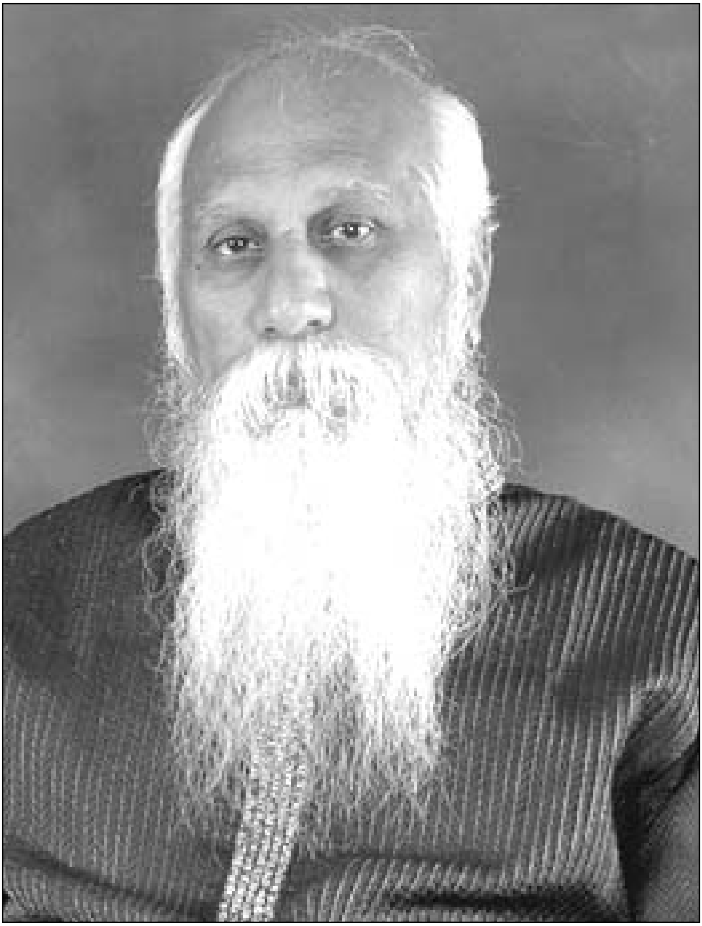

ब्रह्मर्षि पत्री जी का संदेश

सांख्य योग- पंच विशंति

'विशंति = सैकड़ों में पाँचवाँ भाग (सौ में पाँचवाँ भाग)

"पंच = पाँच'

अतः **पंच विशंति** यानी **'पच्चीस'**

पुरुष - प्रकृति का मेल ही सृष्टि है = 25 तत्व

यह समस्त सृष्टि पच्चीस तत्वों से जुड़ी हुई है।

पुरुष अर्थात मूल चेतना का शकल अर्थात् जीव (जीवात्मा यानी अंशात्मा)

जीवात्मा = पुरुष + कारण शरीर + सूक्ष्म शरीर + स्थूल शरीर

25 = 1+2+17+5

पुरुष की संख्या = एक है।

चौबीस तत्वों से जुड़ी हुई है 'प्रकृति'

प्रकृति में प्रवेश करते हुए जीवात्मा तीन शरीर धारण करती है

कारण शरीर (2), **सूक्ष्म शरीर** (17) **और स्थूल शरीर** (5)

कारण शरीर की संख्या =2 = 'चित = अहंकार

सूक्ष्म शरीर की संख्या = 5+5+5+1+1 = 17

सूक्ष्म शरीर = पंचतन्मात्राएँ 5 = पाँच ज्ञानेन्द्रिय - 5

+ पाँच कर्मेन्द्रिय - 5 = मन-1 = बुद्धि-1

तन्मात्राएँ जो है पंच महाभूतो के सूक्ष्म रूप है।

स्थूल शरीर की संख्या 5 है वही पंच महाभूत है

इसलिए इस भौतिक संसार में भौतिक देहधारी जीव की संख्या = 25

पंचविशंति = 25

मनुष्य की मृत्यु हो जाने पर उसकी संख्या = 25 - 5 = 20

सूक्ष्म लोक से कारणलोक में जाने पर उसकी संख्या = 20-17 = 3

आत्मज्ञान प्राप्त होने पर अहंकार नष्ट होकर चित्त परिशुद्ध होने पर उसकी संख्या = 3-2 = 1 होती है।

तब आराम से अद्वैत रूप से पुरुषोत्तम के समान परमात्मा के रूप में, शाश्वत रूप से प्रकाशित होगा।

यही कपिल महामुनि प्रणीत सांख्य योग का सारांश है।

‘आध्यात्मिक विज्ञानशास्त्र छः सिद्धांत’

आत्म सिद्धांत

हम आत्म स्वरूप है। महाकारण लोकों के पूर्णात्मा के अंशात्मा ही है हम।

जन्म - पुनर्जन्म सिद्धांत

प्रथम बार अंशात्मा एक भौतिक शरीर को चुनकर इस धरती पर जन्म लेने के समय वह पहला जन्म होता है। उसी आत्मा का बार- बार जन्म लेना पुनर्जन्म कहलाता है। भिन्न-भिन्न भौतिक अनुभवों के लिए स्व इच्छा से इस धरती पर आत्माएँ आती जाती रहती है।

कर्म - कर्मफल सिद्धांत

हमारे द्वारा किया गया कोई भी कार्य समय और संदर्भ के अनुसार उस कर्म के अनुरूप प्रतिफल (परिणाम) अवश्य प्राप्त करता है। जैसी करनी वैसी भरनी।

पुरोगमन का सिद्धांत

प्रत्येक भौतिक अनुभव प्रसन्नता, अथवा दुख प्रदान करें तो भी एक निर्दिष्ट ज्ञान अवश्य प्रदान करती है। इसलिए कहीं भी, कभी भी, किसी भी पल, किसी भी परिस्थिति में आत्मा का पुरोगमन ही है।

योग सिद्धांत

भिन्न-भिन्न कर्मों का आचरण करते हुए, भिन्न-भिन्न अनुभवों को प्राप्त करते हुए पुरोगमन की दिशा में यात्रा करती हुई आत्मा, अपने पुरोगमन को और अधिक तेज करने के लिए किया गया प्रयत्न जैसे- योग साधना, ध्यानयोग, स्वाध्याययोग, तथा सज्जन सांगत्य योग है।

अनेकानेक सिद्धांत

सृष्टि में करोडो लोक अनेकानेक जीव, अनेकानेक अनुभव,
ज्ञान और अनेकानेक ज्ञान के कोण है।
ये सब दिव्य चक्षु के द्वारा ज्ञात करने वाले सत्य है।

आत्मा की वास्तविक कथा

आत्मा जो है...आदि और अंत रहित है, आद्यत रहित है।

आत्मा...भौतिक नहीं है।

आत्मा...मूल चेतना।

आत्मा..भौतिक रूप रेखा रहित है।

आत्मा...केवल अनुभव योग्य है।

आत्मा...भौतिक भार रहित है।

आत्मा...केवल अनुभव भारयुत है।

आत्मा...एक इच्छाओं का समूह है।

आत्मा की तपिश सदा नये-नये अनुभवों के लिए ही है।

आत्मा का उपन केवल भिन्न विभिन्न अनुभवों के लिए ही है।

आत्मा के लिए सारी परिस्थितियाँ आशा को जन्म देने वाली होती है।

आत्मा सारी परिस्थितियों को समझना है। इस प्रकार सदा उतावली रहने वाली होती है। आत्मा की कभी हार नहीं होती, केवल आत्महत्या करने पर ही उस की हार हुई समझना चाहिए। (आत्म हत्या महा पाप है, कहा गया है। यह आत्मज्ञान रहितों पर अवश्य लागू होती है, पर आत्मज्ञानी पर ब्रह्मज्ञानी पर ब्रह्म हत्या पातक एवं आत्महत्या पातक अर्थात् ब्रह्महत्या का पाप एवं आत्म हत्या का पाप लागू नही होता है।)

आत्मा की हमेशा जीत ही होती है, आत्मा सदैव नित्य नूतन है।

आत्मा जब मानव शरीर धारण करती है, जीवन की परिस्थितियों का सामना

करती है तत्पश्चात भिन्न-भिन्न परितिस्थितियों का
अनुभव करने हेतु व्यग्र रहती है।
मानव जीवन की सारी परिस्थितियों से अवगत होने के लिए
आत्मा को कम से कम चार सौ जन्मों की आवश्यकता होती है।
चार सौ जन्मों में परिपक्व आत्मा
भिन्न-भिन्न अनुभवों को आत्मसात कर
अनेक बार जन्म लेकर यानी अनेक बार शरीर में प्रवेश कर
अनेक बार मृत्यु को प्राप्त कर यानी
अनेक बार शरीर से बाहर आकर
अनेक प्रकार के अपमान, दुःख तिरस्कार सहकर अनेक बार मरकर अर्थात्
अनेक शरीरों से बाहर आकर अनेक बार
मान सुख पुरस्कार आदि का अनुभव प्राप्त कर
एक संपूर्ण ज्ञानवान के रूप में प्रकाशित होती है।
प्रत्येक जन्म, आत्मा को अनेकानेक अनुभव प्रदान करती है।
प्रत्येक अनुभव आत्मा को एक विशिष्ट ज्ञान का सार प्रसादित करती है।
आत्मा सर्वप्रथम इच्छाओं का समूह होती है, आत्मा परंपरा के अनुसार
अनुभवों से समृद्ध होती है। आत्मा अंतिम रूप से ज्ञान का भंडार होती है।
यही आत्मा की वास्तविक कथा है।

मौलिक आध्यात्मिक सत्य

- सृष्टि में करोडो-करोडो लोक स्थित है।
- हमें कई देह है।
- मूल चेतना से वर्षा के समान आत्माओं की सृष्टि सदा होती रहती है और होती रहेगी।
- पूर्णात्मा अर्थात् परिपवव आत्माएं भी नूतन अंशात्माओं की सृष्टि करती रहती है।
- मूल चेतना की आत्माएं अथवा पूर्णात्माओं से आई हुई आत्माएँ, भिन्न-भिन्न अनुभव जन्म मृत्यु के चक्र में अथवा उससे बाहर अवश्य प्राप्त करना है। शैशव दशा की आत्माओं को अवश्य परिणाम क्रम में अवश्य पूर्ण परिणिति प्राप्त करना ही है।
- आत्माओं को सदैव इच्छा-स्वेच्छा रहती है।
- अपनी-अपनी इच्छा-स्वेच्छा के कारण भिन्न-भिन्न कर्म करते हुए, उनके परिणाम प्राप्त करते हुए कई पाठ सीखते रहना सदैव होता ही रहता है।

इस प्रकार के सत्य कई है।
सबको जब-तब वही का वही ज्ञात करते रहना चाहिए।

अंशात्मा - पूर्णात्मा

हम **अंश** पुत्र है।

हम सब **ॠषि** पुत्र है।

हम सब **नीचे** की ओर स्थित आत्माएँ हैं।

सत्य लोकों में यानी महाकारण लोकों में स्थित पूर्णात्मा का अंश हम है।

अंशात्मा - पूर्णात्मा

जब हम पूर्ण रूप से आत्मा परिणिति सिध्द कर लेंगे

तब हम भी उन महाकारण लोकों में पहुँचेंगे।

तब हम भी हममे से नूतन अंशात्माओं की सृष्टि करेंगे

अर्थात् हम भी 'पूर्णात्मा की स्थिति प्राप्त कर लेंगे।

मुडकोपनिषद् में इस प्रकार है-

द्वा सुपर्णा सयुजा सखया समानम् वृक्षम परिषस्वजाते।

तयोरन्यः विप्पलम् स्वादवत्तयनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति ।।

दो पंछी यानी अंशात्मा और पूर्णात्मा

सदा एक ही पेड पर अर्थात् शरीर पर मिलकर रहते हैं

दोनो सुंदर पंखों से एक जैसे ही प्रतीत होते हैं।

उनमें से एक मीठे फल खाता है

और दूसरा कुछ भी न खाते हुए केवल देखते हुए बैठा रहता है।

ध्यान में पराकष्ठा अर्थात् पूर्णात्मा से अनुसंधान होना।

पूर्णात्मा यानी द्वा सुपर्णा नामक ॠवेद के वाक्यों में स्थित दूसरा पंछी यानी ऊपर स्थित पंछी।

ब्रह्मा के मानस पुत्र

जब हम भी
पूर्णात्मा की स्थिति में पहुँच सकेंगे या पहुँच जाएँगे
तब भी हम
अपने अशों का निर्माण कर सकते हैं,
यही ब्रह्मा के मानस पुत्र है।

तब हम भी
उन्हें 'नीचे' स्थित कारण लोको में भेज कर
एक ओर
हमारे स्वयं के कार्य करते हुए
दूसरी ओर
उनके भले-बुरे की देखभाल करना होता रहता है।

आपको भी विधिवत
जन्म-मृत्यु के चक्र में प्रवेश कर सारे पाठ अवश्य सीखने है
जिनकी स्वेच्छा के अनुसार वे विचरण करते हैं
और विधिवत आगे बढ़ते रहते हैं।

जब हम पूर्णात्मा के रूप में विकसित होते है तत्पश्चात् ही
हमारे स्वयं के मानस पुत्रो की सृष्टि कर सकते है।

▲ **प्रत्येक पूर्णात्मा एक ब्रह्म है।**
इसलिए ही मानस पुत्र ब्रह्मा के मानस पुत्र है।

ब्राह्मण - द्विजत्व

ब्राह्मण ही **द्विज** है।
अपने-अपने पूर्णात्माओं से अनुसंधान
प्राप्त करने वाली ही 'द्विज' है।'
ब्रह्म जानाति इति ब्राह्मणः
ब्रह्मज्ञानी ही ब्राह्मण है।

लेकिन
साधारण जन्म के द्वारा कोई भी ब्राह्मण नहीं हो सकता।

द्विजत्व यानी **दूसरा जन्म**
पहला जन्म शारीरिक रूप से माता-पिता से सूचित करता है,
हमारी भौतिक आया को सूचित करता है।
पहले जन्म के द्वारा सभी ब्राह्मणेतर ही है। सभी शूद्र है।
दूसरा जन्म हमारी आत्मा' के बारे में हमें जानकारी देता है।
द्विजयोग साधना के द्वारा ही द्विजत्व प्राप्त होता है।

जीस क्राइस्ट ने कहा-
मैं भगवान का पुत्र हूँ।
अर्थात् वे एक पूर्णात्मा के अंश है। यह बात उन्हें ज्ञात है।
प्रत्येक जीव एक पूर्णात्मा का अंश ही होता है।

हम अंशात्माएँ यह बात होने पाले ही ब्राह्मण है, द्विज है।

आत्मज्ञान - ब्रह्मज्ञान

आत्मज्ञान यानी **आत्मा के बारे में ज्ञान।**
अर्थात् हमें अपने बारे में जानना।
मैं केवल भौतिक शरीर नहीं हूँ, आत्मा भी हूँ यह जानना,
मैं मूल चेतना हूँ यह जानना।
यह सब केवल ध्यान से ही संभव है।

आत्मज्ञान **पहली सीढ़ी** है तो **ब्रह्मज्ञान** अंतिम सीढ़ी है।
ब्रह्मज्ञान यानि सकल चराचर सृष्टि के रहस्यों का ज्ञान
करोड़ों लोकों के बारें में अधिक से अधिक सुस्पष्ट विज्ञान

आत्मज्ञान के बिना **ब्रह्मज्ञान** होना असंभव है।
एक आत्मज्ञानी को **ऋषि** कहते हैं, **द्रष्टा** कहते है।
एक ब्रह्मज्ञानी को **ब्रह्मर्षि** कहते हैं।

स्वयं की पूर्ण निज की स्थिति का ज्ञाता **आत्मज्ञानी**
बाहर की प्रकृति का भी पूर्ण ज्ञाता **ब्रह्मज्ञानी।**

ब्रह्मज्ञानी होने पर ही **ब्रह्मज्ञान** प्राप्त होता है।
ब्रह्मा यानी **सृष्टिकता**।
वे कुछ आत्माओं की, कुछ लोकों की सृष्टि कर सकते हैं।
सकल लोकज्ञानी होने वाला ही नवीन लोकों की सृष्टि कर सकता है।
सह-सृष्टिकर्ता - **क्रियेटर** हो सकता है।

आत्मज्ञान ध्यान द्वारा प्राप्त होने वाले दिव्यचक्षु की प्राथमिक स्थिति है।
ब्रह्मज्ञान दिव्यचक्षु की परम परिपक्व स्थिति है।

निर्वाण के पश्च्यात

निर्वाण

अर्थात् "दुःख राहित्य स्थिति"।

निर्वाण के पश्चात भी स्थितियां होती है।

तत्पश्चात आने वाली स्थिति जन्म राहित्य स्थिति,

उसके पश्चात सृष्टिकर्ता की स्थिति।

यानी

अपने अंतर की स्थिति। नवीन अंगों की सृष्टि कर सकने की स्थिति

और कुछ लोकों की सृष्टि कर पाने की स्थिति।

इसलिए-

"निर्वाण" जो है प्रप्रथम स्थिति है।

तत्पश्चात दो स्थितियां है

परिनिर्वाण और महापरिनिर्वाण।

निर्वाण	परिनिर्वाण	महापरिनिर्वाण
दुःख राहित्य	जन्म राहित्य	सृष्टिकर्ता की पदवी
ऋषि	राजर्षि / महर्षि	ब्रह्मर्षि
अरिहन्त	बोधिसत्व	बुद्ध

गौतम बुद्ध ने बोधि वृक्ष के नीचे ध्यान पूर्ण करने के

पश्चात् कहा- **मैंने महापरिनिर्वाण प्राप्त किया।**

गौतम बुद्ध ने जिस अत्युन्नत महापरिनिर्वाण स्थिति को प्राप्त किया उस प्रकार की ब्रह्मर्षि की स्थिति हमे भी प्राप्त करनी है, वही हमारा ध्येय है।

दिव्य ज्ञान प्रकाश

"वह क्या है?"

"हम कौन है?"

"कहाँ से आए है?"

"कहाँ जा रहे है?"

"किसलिए पैदा हुए हैं?"

"मृत्यु के पश्चात क्या होगा?"

"वास्तव में घटनाएँ किस प्रकार हो रही है?"

"ईश्वर यानी क्या है?"

"यह अद्‌भुत सृष्टिक्रम सब कैसे संभव हो रहा है?"

इस प्रकार के सारे प्रश्नों के परिपूर्ण उत्तर स्वानुभव से जान कर उसके अनुसार जीना ही "दिव्यज्ञान प्रकाश होना कहलाता है।"

ध्यान द्वारा प्रत्यक्ष रूप से और ध्यानियों के अनुभव सुनने के द्वारा, ध्यानियों के पुस्तक पढ़ने के द्वारा परोक्ष रूप से, सबको परिपूर्ण दिव्यज्ञान प्रकाश अल्प समय में ही प्राप्त होता है।

पुजारी - पूर्णात्मा

पुजारी

भक्ति के नाम से, पत्तियों पुष्प तोडते हुए,
दूसरों से भी यही कार्य करवाते हुए "प्रकृति को नष्ट करने वाला"।
छोटे बच्चे खिलौनो से खेलने के समान
बड़ी-बड़ी मूर्तियो से खेलने वाला बड़ा बालक।

मंत्रोपासक

साधना पर विश्वास रखने वाला,
थोडा उन्नत, खिलौनों का खेल त्याग देने वाला,
सारी शक्तियाँ मुझमें ही है यह ज्ञात कर
उन शक्तियों को बाहर निकालने के लिए अत्यंत क्लिष्ट साधनाओ का
आश्रय लेने वाला "साहसी"।

"वेदान्ती"

"प्रकृति का नाश नही करने वाला",
पर आत्मतत्व जान कर भी,
मुझमे ही सारी शक्तियों निहित है यह जानकर भी अपनी शक्ति को बाहर
निकालने के लिए किसी प्रकार की ध्यान साधना न कर अपने शब्दजाल,
वाक्चातुर्य पर स्वयं ही मुख्य होने वाला "मूर्ख"।

'ध्यान साधक'

वास्तविक बुद्धिमान,
स्वयं मे ही सारी शक्तियों को जान लेने वाला,
तुरंत उन शक्तियों को बाहर लाने के प्रयत्न के रूप में, आनापानसति ध्यान
साधना में पूर्ण रूप से निमग्न होने वाला।

“अवधूत”

ध्यानानुभवों में अत्यन्त उन्नत,
निरंतर अन्य लोकों में सूक्ष्म शरीर के द्वारा यात्रा करने वाला,
भौतिक संसार में चारों ओर की जनता का जरा भी परवाह न करने वाला,
“पागल” कहकर इस लोक के पागल समझते है।

“सिद्ध”

ध्यानपराकष्ठा में पहुंचकर अष्टसिद्धियों को अपने अधीन करने वाला,
संसार इसकी सिद्धियों को देखकर डरती है, आश्चर्य चकित होती है।

“बुद्ध”

आखिरी जन्म में रहने वाला,
सबके सिद्धत्व, बुद्धत्व को राह दिखाने वाला,
निरंतर ध्यान, ज्ञान को बोध करते रहने वाला,
“सिद्ध” होना है तो ध्यान परिपूर्ण होना है,
“बुद्ध” होना है तो ध्यान, ज्ञान का बोध निरन्तर करना है।

“एक पूर्णात्मा”

सत्यलोक में ’तारा’ की भाँति शाश्वत रूप से स्थित होकर,
स्वयं में से नवीन अंशात्माओं की सृष्टि कर
उन्हें भी जन्म मृत्यु के चक्र में प्रवेश कराकर,
वे भी बुद्ध होने तक उनके भले-बुरे की देखभाल करने वाला।

“स्पिरिच्युअल साइन्स - आध्यात्मिक विज्ञान शास्त्र”

“मानव का मन” भिन्न है, “मानव जीवन” भिन्न है।
मानव मन, समान और चारों ओर के वातावरण से उत्पन्न होता है।
उतना ही नहीं वह भौतिक शरीर से संबंधित ज्ञानेन्द्रियों के
ढांचे में अधिकतर भ्रमण करते रहता है।
यानी हम जो अधिक देखते हैं, जिसे ज्यादा सुनते है,
जिसका अधिक से अधिक स्वाद लेते हैं
उनके चारो ओर ही मन अधिकतर भ्रमण करते रहता है।
पर मानव जीवन का उद्भव गत जन्मों के कर्मों के जड़ो से होता है।
वर्तमान जीवन, गतजन्मों के बाद का पृष्ठ ही होता है
इसलिए उसके पहले के पृष्ठ समझ में न आने पर
वर्तमान पृष्ठ समझ में नहीं आएगा।
मानव के आत्मक्त जीवन को समाने से ही
“मानव मन पर आधिपत्य प्राप्त होता है।”
प्रत्येक मानव जीवन उपरितल के लोको में स्थित,
आत्मतल में स्थित मूलात्मा के एक और विहार यात्रा के रूप में,
एक और विज्ञान यात्रा के रूप में समझने पर,
ही मन के तीव्रतर प्रभाव से हम सुरक्षित रूप से,
कुशलता से बाहर निकल सकते हैं।
वास्तव में इस लोक में तात्कालिक रूप से जीवन जीते हुए
आत्मलोकवासी ही है हम,
वास्तव में इस लोक में भौतिक काया में निवास करने वाले एक
‘सनातन मूलात्मा‘ है।
अनेकानेक जन्मों के कर्मफल के संसार

जनित संकल्पों के प्रभाव से जुड़ी हुई यह
वर्तमान जीवन भिन्न-भिन्न विविधताओं से पूर्ण मूलात्मा के
वास्तविक तलों से उत्पन्न प्रत्येक वर्तमान मानव जीवन
तराजू के एक पलड़े मंत और मानव औसत
सामाजिक मानसिक सामूहिक क्षेत्र एक और पलड़े में,
इन दोनों के मध्य अंतहीन संघर्ष।

‘मन के भिन्न-भिन्न संघर्षो से मन के निरंतर डोलायमान स्थिति में से उढ़ती हुई अविराम तरंगों का भीषण सागर और कुशलतापूर्वक बाहर निकलना है तो मानव-आत्मा के जीव के बारें में संपूर्ण रूप से समझना है। उसके लिए प्रत्येक मानव को ‘आत्मशास्त्र‘, ‘आध्यात्मिक विज्ञान शास्त्र‘, “ध्यानशास्त्र” आदि के बारे में अवश्य जानकारी प्राप्त करना ही चाहिए। पिरामिड स्पिरिच्युअल सोसाइटीस मूवमेंट के द्वारा अविर्भावित
जातिय आध्यात्मिक शास्त्रवेताओं की सभा द्वारा
स्पिरिन्युअल साइन्स को
“आध्यात्मिक शास्त्र” को हम देशव्याप्त, विश्वव्याप्त कर रहे है।
प्रत्येक मानव आत्मजीवन से ज्ञान प्राप्त करें।
प्रत्येक मन पर भरपूर विजय प्राप्त करें।
प्रत्येक मेधावी अब स्पिरिच्युअल वैज्ञानिक बनें।
कई लोगों के लिए यह एक अनुत्तरित प्रश्न ही होता है।

वास्तव में इस जीवन का लक्ष्य क्या है? यानी इस जीवन में क्या करना चाहिए? जीवन का गंतव्य स्थान (मंजिल) क्या है? अर्थात् यह यात्रा (जीवन की) कहाँ तक है? मृत्यु तक? या और कुछ है? इस जीवन यात्रा का अंत है कि नहीं? है तो कब अंत होगा? कहाँ तक है इस जीवन की यात्रा ये भी कई लोगों को ज्ञात नहीं और उन्हें समझ मे भी नहीं आता। इसलिए इस प्रश्न के उत्तर को जानने का प्रयत्न ही ‘वह जीवन क्यों?‘

यह जीवन क्यों? कई लोगो को इस प्रश्न का उत्तर ही नहीं पता होता और प्रश्न के रूप में ही उनके सामने उपस्थित रहता है। इस जीवन का लक्ष्य क्या है? इस जीवन में क्या करना चाहिए? क्या प्राप्त करना है? कहाँ तक है इस जीवन की यात्रा इसका गम्यस्थल कौन सा है? क्या मृत्यु प्राप्त होने तक? इस जीवन यात्रा का अंत है कि नहीं? यदि है तो कब अंत होगा? कहाँ तक है इस जीवन की यात्रा यह भी कई लोगों को ज्ञात नहीं और उन्हें इसकी समझ भी नहीं है।

इसलिए इस प्रश्न का उत्तर जानने के एक प्रयास यह जीवन क्यों

- तटवर्ती वीर राघव राव

MB
Publishing
House

/mbpublishinghouse
@mbpublishinghouse

Rs.100/-